उच्च न्यायालय उत्तराखंड, नैनीताल ।

संदीप बंसल बनाम सुनीता एवं अन्य

डब्ल्यू.पी.एम.एस. संख्या 2418/2022

माननीय मनोज कुमार तिवारी, जे.

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता श्री भुवन भट्ट को सुना।

याचिकाकर्ता ने संदीप प्रसाद उनियाल के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए एक मुकदमा दायर किया, जिसमें उन्होंने संदीप प्रसाद उनियाल द्वारा श्रीमती सुनीता के पक्ष में निष्पादित एक बिक्रय विलेख को रद्द करने की भी मांग की। वादी के साक्ष्य को बंद करने के पश्चात श्रीमती सुनीता (वाद में प्रतिवादी संख्या 2) ने अपने जवाबदावा में संशोधन करने की अनुमति के लिए आवेदन दायर किया। कथित आवेदन को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 17.09.2022 के आदेश द्वारा स्वीकार किया गया, जिसे इस रिट याचिका में चुनौती दी गई है।

याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रतिवाद किया गया है कि वादी के साक्ष्य को बंद करने के पश्चात प्रतिवादी नं. २ को संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती थी। सी. पी. सी. के आदेश VI नियम 17 के परन्तुक पर आधार रखा गया है, जो नीचे दिया गया हैः

> "सी. पी. सी. के आदेश VI नियम 17- **अभिवचनों का संशोधन** -न्यायालय कार्यवाही के किसी भी चरण में किसी भी पक्षकार को अपने अभिवचनों में ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों पर, जो न्यायसंगत हों, परिवर्तन या संशोधन करने की अनुमति दे सकता है और ऐसे सभी संशोधन किए जाएंगे जो पक्षकारों के बीच विवाद में वास्तविक प्रश्नों का आदेश करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक हों:
>
> परंतु विचारण प्रारंभ होने के पश्चात संशोधन के लिए किसी आवेदन को तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक विचारण इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता कि सम्यक तत्परता के बावजूद पक्षकार विचारण प्रारंभ होने से पूर्व मामले को नहीं उठा सकता था।"

संशोधन की अनुमति हेतु प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा आवेदन अभिलेख में है। इसके अवलोकन से पता चलता है कि प्रतिवादी नं. २ ने मुकदमा सम्पति में प्रतिवादी नं. १ के हितधारक-पूर्ववर्ती का नाम जोड़ने की अनुमति इस आधार पर मांगी थी कि उक्त तथ्य उसके द्वारा १६.०९.२०२२ को ही पाया गया जब उसको प्रासंगिक खतौनी (राजस्व रिकॉर्ड) मिली थी।

याचिकाकर्ता ने अपनी आपत्ति में तर्क दिया कि जवाबदावा में जोड़े जाने वाले तथ्यों के बारे में प्रतिवादी नं. २ को शुरुआत से ही जानकारी थी, इसलिए, आवेदन अस्वीकार किये जाने योग्य है।

विद्वान विचारण न्यायालय ने 17.09.2022 के आदेश के माध्यम से इस आवेदन को यह कहते हुए स्वीकार किया कि संशोधन का परिणाम न तो किसी भी स्वीकृति को वापस लेना है और न ही संशोधन के लिए अनुमति देने से मुकदममे की प्रकृति में बदलाव होने जा रहा है।

याचिकाकर्ता ने उस आदेश को चुनौती दी है, जिसमें संशोधन की अनुमति दी गई थी। इस न्यायालय को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा किए गए विवेकाधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं मिला है, वह भी संविधान के अनुच्छेद 227 के से पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार के अंतर्गत।

यह सुस्थापित है कि जवाबदावा में संशोधन करने की अनुमति मांगने वाले आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय को उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।अभिवचनों में संशोधन करने का उद्देश्य मुकदमों की बहुलता से बचना है।

भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम संजीव बिल्डर्स प्राइवेट लि. (2018) 11 SCC 722 के मामले में दिए गए निर्णय के पैरा संख्या 15 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि केवल विलम्ब होना संशोधन को अस्वीकार करने का आधार नहीं है।

राम निरंजन कजारिया बनाम शिव प्रकाश कजारिया, (2015) 10 एस. सी. सी. 203 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया हैः

> "**22.** लिखित कथन में संशोधन के लिए आवेदन करने में विलम्ब अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं हो सकता है, चाहे वह नया तथ्य प्रस्तुत करने के लिए हो या किसी प्रवेश के स्पष्टीकरण या स्पष्टीकरण के लिए हो या वैकल्पिक स्थिति लेने के लिए हो। यह देखा गया है कि हमारे सामने मामले में मुद्दों को मात्र 2009 में तैयार किया गया है। संशोधन की प्रकृति और स्वरूप और अन्य परिस्थितियां, जैसा कि हमने ऊपर निर्दिष्ट किया है, संशोधन के लिए आवेदन पर विलम्ब और उसके परिणाम पर विचार करते समय प्रासंगिक हैं। लेकिन किसी भी पक्ष को अभिवचनों में प्रवेश को पूरी तरह से वापस लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा नगीनदास के रामदास बनाम दलपतराम इच्छाराम मामले में निर्धारित किया गया है। पैरा 27: (एससीसी पृष्ठ 251-52)
>
> "**27.** बार में उद्धृत मामलों के संक्षेप से यह सिद्धान्त उभरता है कि यदि डिक्री पारित करते समय न्यायालय के समक्ष कुछ सामग्री थी, जिसके आधार पर न्यायालय प्रथमदृष्टया बेदखली के लिए वैधानिक आधार के अस्तित्व के बारे में संतुष्ट हो सकता है, तो यह माना जाएगा कि न्यायालय इस प्रकार संतुष्ट था और बेदखली के लिए डिक्री हालांकि स्पष्ट रूप से समझौते के आधार पर पारित की गई थी, वैध होगी। ऐसी सामग्री मामले में दर्ज किए गए या पेश किए गए साक्ष्य का रूप ले सकती है, या यह आंशिक या पूरी तरह से समझौते में व्यक्त या निहित स्वीकारोक्ति के रूप में हो सकती है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 58 के से पक्षकारों या उनके एजेंटों द्वारा मामले की सुनवाई के समय या उसखंड पहले किए गए अभिवचनों या न्यायिक स्वीकृतियों में

प्रवेश, साक्ष्य संबंधी स्वीकृतियों की तुलना में उच्च स्तर पर है। प्रवेश का पूर्व वर्ग पूरी तरह से उस पार्टी पर बाध्यकारी है जो उन्हें बनाता है और सबूत की माफी का गठन करता है। उन्हें ही दलों के अधिकारों का आधार बनाया जा सकता है। दूसरी ओर, विचारण संबंधी स्वीकारोक्ति, जो विचारण में विचारण के रूप में प्राप्य हैं, अपने आप में निश्चायक नहीं हैं। उन्हें गलत साबित किया जा सकता है। (जोर दिया गया)

चूंकि संशोधन के परिणामस्वरूप स्वीकृति वापस नहीं होती है और न ही ऐसे संशोधन द्वारा मुकदमे की प्रकृति में परिवर्तन होता है, इसलिए यह न्यायालय मूल वाद संख्या 485 सन 2015 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता है।

मामले के इस तरह के दृष्टिकोण में, रिट याचिका विफल होती है और खारिज की जाती है। वादखर्च के बारे में कोई आदेश नहीं होगा.

(मनोज कुमार तिवारी, जे.)

29.09.2022

अर्पन